#२९: सत्यता-५ : नियम ही न्याय

दिनांक -८/१२/२०११

नियम ही न्याय रूप में जागृत मानव परम्परा में व्यवहृत होता है | नियम, नियति विधि से होता है | यह भ्रमित मानव का कल्पना से परे है | जागृत मानव में विकसित चेतना विधि से ही जीना होता है | विकसित चेतना ही मानव चेतना, देव चेतना, दिव्य चेतना के रूप में गण्य है | विकसित चेतना का आधार विकल्प रूप में सह-अस्तित्ववादी विचार रूप में प्रस्तुत हो चुका है | विकसित चेतना ही मानव का स्वत्व है | स्वत्व के साथ ही स्वतंत्रता व अधिकार बनता है | अधिकार का मतलब है समझदारी सम्पन्न होना | समझदारी जागृत चेतना ही है अथवा विकसित चेतना सम्पन्नता ही है | यही मानव चेतना रूप में स्वत्व, स्वतंत्रता, अधिकार शुरू होता है | देव चेतना में स्वतंत्रता पर अधिकार, दिव्य चेतना में परम होता है, यही स्वानुशासन है | परम का मतलब है, अंतिम उपलब्धि | यह मानव चेतना के रूप में आरम्भ होता है, उपलब्धि देव चेतना, दिव्य चेतना में भी आचरित होते हैं | उपलब्धियों का प्रमाण रूप अखण्ड समाज सार्वभौम व्यवस्था है | व्यक्ति के रूप में समाधान सम्पन्न होना, परिवार के रूप में समाधान, समृद्धि सम्पन्न होना, अखण्ड समाज के रूप में अभयता सम्पन्न होना ही वर्तमान में विश्वास होना है | चारों अवस्थाओं में उपयोगिता- पूरकता प्रमाण होना, यही सह-अस्तित्व का होना नित्य प्रमाण पाया जाता है | यही विधि विधान ही नियम है | यह प्राकृतिक है |

प्रकृति चार अवस्थाओं के रूप में है जो पदार्थ, प्राण, जीव व ज्ञानावस्था के रूप में गण्य है | ज्ञानावस्था में मानव गण्य होता है | इसका प्रमाण में जंगल युग से आरम्भ होकर भौतिक विचार के अनुसार जीने तक विकसित हो चुका है | इसमें व्यक्तिवाद, समुदायवाद तक ही पहुंच पाया है | व्यक्तिवाद, समुदायवाद- ये दोनों मानव के लिये विकसित चेतना का अर्थ न होकर जीव चेतना में समीक्षित हो गया है अथवा जीव चेतना में जीना बन गया है | जीव चेतना में जीते हुए मानव में, से, के लिये जीवों से अच्छा जीने के क्रम में घर, मकान, आहार, सड़क, यंत्र आदि सुविधाओं को स्वीकार किया है | यह हर व्यक्ति व समुदाय में प्रमाणित हो चुका है | हर मानव इसे अंतिम उपलब्धि मानने पर, हर व्यक्ति अपने को श्रेष्ठ, हर समुदाय अपने को श्रेष्ठ, अपनी ही धरती, अपनी ही सम्पदा को श्रेष्ठ मान बैठा है | इनके साथ ही नर-नारी में असमानता, गरीबी-अमीरी में असंतुलन- ये दो प्रधान बिंदु बने रहे |

ये दो विषमताएं ही धरती पर जितने भी देश, समुदाय पाया गया है, सभी में इसको पाया जाता है | यही जीव चेतना का देन है | जीव चेतना में पुरुष जाति मनमानी करता है, स्त्री जात संयत रहता है | इसको हर देश काल में परीक्षण किया जा सकता है, निष्कर्ष निकाला जा सकता है | इस पर हर व्यक्ति सोच सकता है | इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि हर नर-नारी में समानता एवं गरीबी- अमीरी में संतुलन आवश्यक है | इन दोनों मुद्दों में समाधान प्रस्तुत करने के लिये मध्यस्थ दर्शन सह-अस्तित्ववाद प्रस्तुत है जो अस्तित्व मूलक मानव केंद्रित चिंतन पर आधारित है | इस क्रम में हर मानव हर देश काल में सहमत है | उक्त दोनों बिंदुओं में समाधान चाहिए या समस्या मे झूलना है? इसके उत्तर में यही आता है कि समाधान चाहिए | विकसित चेतना विधि से समाधान सम्पन्न होना होता है | विकसित चेतना विधि से मानव चेतना, देव चेतना, दिव्य चेतना प्रमाणित हो पाता है |

विकसित चेतना में ही समस्त प्रकार के समाधान अथवा समस्त विधा में समाधान अथवा समस्त मुद्दों में समाधान, हर मानव में, से, के लिये चेतना विकासपूर्वक सुलभ होता है | इसे ध्यान में रखते हुए हर मानव अपने लक्ष्य को पाना सहज होता है | मानव लक्ष्य समाधान, समृद्धि, अभय, सह-अस्तित्व को प्रमाणित करना प्रधान है | इसी के अनुकूल विधि रूप में नियम, नियंत्रण, संतुलन, न्याय, धर्म, सत्य प्रमाणित होता है | इसके फलस्वरूप अथवा इस विधा, शैली के फलस्वरूप स्वधन,स्वनारी/स्वपुरुष, दयापूर्ण कार्य -व्यवहार को प्रमाणित करना ही व्यवहारमूलक, विचारमूलक, अनुभवमूलक प्रमाण है | इस प्रकार से जीना ही नियमपूर्वक जीना होता है | यही नियम ही न्याय अर्थात इन तीनों विधाओं में अर्थात उक्त तीनों विधाओं में प्रमाणित होना ही नियम है | यह पूर्णतःनियति विधि से पाया जाने वाला नियम है |

सर्वशुभ हो! जय हो! मंगल हो! कल्याणहो!

- ए.नागराज | प्रणेता एवं लेखक, मध्यस्थ दर्शन (सहअस्तित्ववाद) | श्री भजनाश्रम, अमरकंटक, जिला अनूपपुर , म.प्र. भारत